E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

उत्तर भारतीय संगीत में लय, स्वर, ताल का सामंजस्य

राम सखी सौर
शोधार्थी

Paper Received date

05/05/2026

Publishing Date

10/05/2026

DOI

https://doi.org/10.5281/zenodo.20412437

IMPACT FACTOR 5.924

समस्त भूमंडल में व्याप्त चर अचर सहित समस्त प्राणियों में संगीत समाया हुआ है। ऐसी मान्यता है कि यह न केवल मानव व्यवहार में उपयोग किया जाता है, अपितु हम देखते हैं कि पशु पक्षी यहां तक की पौधों पर भी संगीत का सार्थक प्रभाव पड़ता है। ऐसा मानते हैं कि उत्तर भारतीय संगीत की शास्त्रीय संगीत से ही उत्पत्ति हुई है। भारत से यह संगीत विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त हुआ। जब हम उत्तर भारतीय संगीत का गहन अध्ययन करते हैं तथा चिंतन करते हैं तब हम पाते हैं कि शास्त्रीय संगीत में लय स्वर एवं ताल का बहुत सुंदर सामंजस्य स्थापित होता है। हम यह भी कह सकते हैं कि लय स्वर ताल के सामंजस्य के बिना शास्त्रीय संगीत की परिकल्पना संभव नहीं है। शास्त्रीय संगीत एक तरह का साहित्य है। जब उसमें लय, स्वर, ताल का समावेश होता है तब व्यवस्थित रूप से वह शास्त्रीयता को प्राप्त होता है और शास्त्रीय संगीत कहलाता है। शास्त्रीय संगीत के विभिन्न आयाम होते हैं, यथा शास्त्रीय गायन, शास्त्रीय वादन एवं शास्त्रीय नृत्य। शास्त्रीय गायन के भी विभिन्न भेद होते हैं। जैसे– ख्याल गायन, धमार गायन, टप्पा गायन, ठुमरी गायन इत्यादि। शास्त्रीय गायन के साथ–साथ गायन की अन्य विधाऐं भी बहुत अधिक लोकप्रिय होती हैं, जिन्हें लोक संगीत के नाम से जाना जाता है। अतः हम यह पाते हैं कि चाहे वह शास्त्रीय संगीत हो, चाहे वह लोक संगीत हो अथवा ध्रुपद धमार कुछ भी हो सभी में लय स्वर ताल का सामंजस्य अथवा लय एवं ताल की उपस्थिति आवश्यक होती है, तभी वह संगीत रस में निर्मित होता है। यदि संगीत में लय नहीं होगी तो वह संगीत अपनी सही एवं व्यवस्थित चाल में नहीं चल पाएगा निर्धारित गति को प्राप्त करने के लिए हमें लय की आवश्यकता होती है। लय, स्वर, ताल के सामंजस्य से ही शास्त्रीय संगीत का व्यवस्थित स्वरूप सामने आयेगा। भारतीय संगीत में प्रयुक्त स्वरों की उपादेयता पर पंडित विष्णु भातखंडे जी ने लिखा है कि ''संगीत के प्राचीन नियम अभी तक अपने संगीत विद्वान् मान्य करते हैं, किन्तु इससे पाठकों को यह नहीं समझना चाहिए कि अपने शुद्ध व विकृत स्वर उन पुराने ग्रन्थकारों के स्वरों से भिन्न हो गये हैं। उसका कारण सहज ध्यान में आने योग्य है।''[1]

हम यह पाते हैं कि संगीत भले ही उत्तर भारतीय अथवा दक्षिण भारतीय हो दोनों में ही लय स्वर ताल की बराबरी से भागीदारी होती है। बिना लय स्वर ताल के किसी भी प्रदेश का संगीत शास्त्री संगीत नहीं कहलाएगा। हम कह सकते हैं कि भारतीय संगीत में लय स्वर ताल संगीत के प्राण होते हैं। जिस प्रकार से मानव शरीर एक है और उसमें प्राण विद्यमान होने से शरीर का महत्व होता है, ठीक उसी प्रकार संगीत (गायन–वादन नृत्य) रूपी संगीत शरीर में लय, ताल रूपी प्राण रहने से ही उस संगीत की सार्थकता सिद्ध होती है। निष्कर्ष में यही बात सामने आती है कि संगीत में लय एवं ताल तथा स्वर का आपसी सामान्य बहुत आवश्यक है। शास्त्रीय संगीत में मुख्य रूप से स्वरों की उत्पत्ति आंदोलन से होती है। आंदोलन की निर्धारित गति को नाद कहते हैं। इस संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए श्री विनायक राव पटवर्धन जी ने राग विज्ञान चतुर्थ भाग में कहा है कि '' साधकों की दृष्टि प्रयोग के क्षेत्र में इसीलिये आंदोलन प्रक्रिया को अपने लिये तब तक निरर्थक समझती रहेगी जब तक यह गणित साध्य स्वरों के प्रयोग में सिद्धि प्राप्त करने का कोई सरल उपाय न बता दें।''[2]

शास्त्रीय संगीत का सबसे अनिवार्य अंग होता है स्वर। स्वर से ही विभिन्न प्रकार के थाट एवं उन थाटों के स्वरों से रागों की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि संगीत में स्वर का बहुत अधिक महत्व है। डॉक्टर कमलेश सक्सेना जी ने घराना अंक में कहा है कि ''गुरु अपनी आवाज के साथ रियाज व मेहनत से जिस रसीली व

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

सौंदर्यपूर्ण गायकी का निर्माण करता है उसी को अपने शिष्यों के कंठ में उतारने के लिये वह वर्षों प्रयत्नशील रहता है, जिसे तालीम कहते हैं।''[3]

जिस प्रकार से शास्त्रीय संगीत में स्वर, अलंकार एवं थाटों के रियाज की आवश्यकता होती है ठीक उसी प्रकार से ताल एवं लय पर समान अधिकार तथा सतत अभ्यास की भी महती आवश्यकता होती है। संगीत के विभिन्न ग्रंथों में हम पाते हैं कि गंधर्व गान और वाग्गेयकार इन शब्दों का बहुत अधिक उपयोग किया गया है। वाग्गेयकार वह होता है जो कि गायक हो और काव्य रचना, गद्य एवं ताल की दक्षता रखता हो तथा संगीत का विशिष्ट जानकारी हो। गांधर्व वह कहलाता है जो कि लगातार संगीत एवं नृत्य के साथ–साथ तालों का अभ्यास करता हो और उपयोग करता हो, उसको गांधर्व कहते हैं। इसकी विशेष व्याख्या करते हुए डॉक्टर सुभद्रा चौधरी जी ने अपनी पुस्तक भारतीय संगीत में लाल और रूप विधान में विशिष्ट व्याख्या करते हुए लिखा है– ''जो अनादि संप्रदाय, गांधर्वों द्वारा प्रयुक्त नियत रूप से कल्याणप्रद है उसे गांधर्व कहा जाता है और जो वाग्गेयकार द्वारा रचित, लक्षणों से अन्वित, देशी रागों में तथा जनरंजन करने वाला हो वह गान है।''[4]

उत्तर भारत में अनादि काल से ही गायन वादन नृत्य चित्रकला आदि अनेक विभिन्न कलाओं का प्रयोग मानव कल्याणार्थ किया जा रहा है। इन सभी कलाओं में शास्त्रीय संगीत की कला दैवीय कला मानी गई है। इसका उपयोग करने से व्यक्ति का व्यक्तित्व निखर कर सामने आता है विभिन्न कलाओं को उद्धृत करते हुए डॉक्टर हिमांशु एवं वीणा विश्वरूप जी ने अपने आलेख में लिखा है कि– ''भारत में गायन, वादन, नृत्य, चित्रकला, मूर्तिकला, स्थापत्य कला इत्यादि की एक समृद्ध, दीर्घ परम्परा ऐसी है जो समाज में रिवाजों एवं भारतीय दर्शन के साथ घुली मिली है।''[5] यदि हम उत्तर भारतीय संगीत की व्युत्पत्ति के बारे में तथ्यात्मक खोज करते हैं तो हम पाते हैं कि हमारा शास्त्रीय संगीत अति प्राचीन है और यह वैदिक काल से चला आ रहा संगीत, जनकल्याणार्थ उपयोग किया जा रहा है। शास्त्रीय संगीत की उपयोगिता हमारे धार्मिक ग्रंथो में भी समय–समय पर उद्धृत की जाती रही है। डॉ. जयंत खोत ने अपने आलेख में लिखा है कि – ''भारत वर्ष का संगीत विषयक ज्ञान अति प्राचीनतम है जिसका उद्गम वैदिक काल से माना जा सकता है। भारतीय शास्त्रीय संगीत का विकास, जाति, प्रबंध, ध्रुपद, धमार, ख्याल, टप्पा, ठुमरी, ग्राम्यगीत, भक्ति गीत एवं अन्य कई पारम्परिक विधाओं के रूप में हुआ।''[6]

भारतीय शास्त्रीय संगीत से यदि लय को हटा दिया जाए तो केवल स्वर और ताल के आधार पर संगीत की रचना सार्थक सिद्ध नहीं होगी अथवा स्वर को हटा दिया जाए तो लय एवं ताल के आधार पर बंदिश या स्वरलिपि नहीं बन सकती है। यदि ताल को हटा दिया जाए तो बिना ताल के स्वर केवल एक कविता अथवा बंदिश के रूप में तो रह सकती है लेकिन किसी ताल में निबंध ना होने से उसमें वह सुंदरता प्रतीत नहीं होगी। हम पाते हैं कि संगीत में और साहित्य में परस्पर सामंजस्य की नितांत आवश्यकता होती है। संगीत और साहित्य में सामंजस्य स्थापित करते हुए श्री तेज सिंह टॉक लिखते हैं कि ''संगीत और साहित्य का माध्यम नाद है। पांचों कलाओं के माध्यमों की दृष्टि से नाद आकाश का विषय होने के कारण सबसे सूक्ष्म है। अतः ये अन्य कलाओं से श्रेष्ठ है।''[7]

संगीत के समग्र अध्ययन करने से हमें ज्ञात होता है कि जितना गायन में लय और ताल का सामंजस आवश्यक है उसी प्रकार से नृत्य में रस का सामंजस्य नितांत आवश्यक है। नृत्य में 9 रस माने गए हैं। सभी रसों की अपनी–अपनी अलग–अलग रस कल्पना निहित होती है। रस सिद्धांत के बारे में डॉक्टर अवधेश प्रताप सिंह तोमर लिखते हैं कि ''नाट्यशास्त्र के प्रणेता भरत ने ही सर्वप्रथम रस सूत्र का प्रवर्तन किया। इस पर ही मातृगुप्त, उद्भट, लोल्लट, शंकुक, भट्टनायक, हर्ष कीर्तिधर, अभिनव गुप्त आदि अनेक विद्वानों ने इस पर ही विवेचना प्रस्तुत की। अभिनव गुप्त की 'रस सूत्र' व्याख्या को चरमोत्कर्ष तक पहुँचा सका।''[8]

उत्तर भारतीय संगीत में स्वर ताल के सामंजस्य या स्थापित हो जाने से सांस्कृतिक चेतना की अभिवृद्धि होती है वैसे भी भारतवर्ष सांस्कृतिक चेतना के लिए विश्व विख्यात है। जिस व्यक्ति ने शास्त्रीय संगीत का भले ही गायन, वादन अथवा नृत्य का अभ्यास किया हो उसमें सांस्कृतिक चेतना निश्चित रूप से निहित होती है। डॉ. स्मिता सहस्त्रबुद्धे कुलगुरू राजा मानसिंह तोमर संगीत एवं कला विश्वविद्यालय ग्वालियर ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि ''भारत में सांस्कृतिक चेतना की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति सार्वभौम सत्य के आधार पर प्रतिष्ठित धार्मिक भावना और दार्शनिक चिन्ताधारा के माध्यम से हुई है। कला, शिल्प, साहित्य और संगीत इन्हीं की आधुषांगिक उपलब्धियाँ हैं।''[9]

भर्तृहरि जी ने लिखा है कि साहित्य संगीत कला विहीनः, साक्षात् पशु पुच्छ विशाण हीनः। अर्थात् जिस व्यक्ति में साहित्य–संगीत–कला की रुचि नहीं होती है वह व्यक्ति एक सींग अथवा पूँछ विहीन पशु के समान होता है। इसका

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

सार यही निकलता है कि प्रत्येक व्यक्ति में जो इस धरातल पर विद्यमान है उसमें साहित्य के प्रति अथवा संगीत के प्रति या किसी कल के प्रति विशेष लगाव आवश्यक होता है, रुचि अवश्य होती है तभी वह अपना जीवन सार्थक जी पाता है। शास्त्रीय संगीत में जैसा कि हम सभी जानते हैं स्वर सबसे अधिक महत्वपूर्ण चीज होती है। स्वर और ताल, स्वर और नाद ही संगीत के प्रमुख अंग माने जाते हैं। भारतीय शास्त्रीय संगीत में स्वर के सामंजस्य को स्थापित करते हुए डॉक्टर स्वप्ना मराठे ने अपने आलेख में लिखा है कि ''सगीत की सृष्टि नाद से होती है, जिस तरह मिट्टी या पत्थर से मूर्ति, रंग से चित्र और ईंट पत्थरों से महल तैयार होते हैं, उसी तरह नाद से संगीत प्रस्फुटित होता है। कोई नाद जितना भी श्रुति मधुर हो अकेला संगीत का रूप नहीं ले सकता।''[10]

उपरोक्त विशिष्ठ अध्ययन से तथा विभिन्न विद्वानों के महत्वपूर्ण विचारों का सारगर्भित निष्कर्ष निकालने के बाद यह कहा जा सकता है कि उत्तर भारतीय संगीत मे लय विद्यमान है, जिसका सदैव विशेष महत्व होता है। जब संगीत में लय स्वर का सामंजस्य सही बैठाया जाता है तभी वह सार्थक एवं सफल संगीत माना जा सकता है। वैसे भी हमारा भारतीय शास्त्रीय संगीत विश्व पटल पर एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है, और इसकी अपनी सुगंधि सतत प्रवाहित होती रहती है। अतः यह कहा जा सकता है कि मानव मात्र को अपने जीवन में लय को समाहित करना चाहिए जिससे उसका जीवन एक निश्चित गति में चल करके सार्थक एवं सफल सिद्ध हो सके।

संदर्भ सूची

1. भातखंडे पं. विष्णु नारायण ''क्रमिक पुस्तक मालिका चौथी पुस्तक'', हाथरस। संगीत प्रकाशन : 1952 पृष्ठ 17
2. पटवर्धन पं. विनायक राव ''राग विज्ञान चतुर्थ भाग'' पुणे। श्री मधुसूदन विनायक पटवर्धन : 1959 पृष्ठ 01
3. सक्सेना डॉ. (कु.) कमलेश ''घराना अंक'' हाथरस। संगीत कार्यालय : 1982 पृष्ठ सं. 14
4. चौधरी डॉ. सुभद्रा ''भारतीय संगीत में ताल और रूप विधान'' अजमेर। कृष्णा ब्रदर्स : 1984 पृष्ठ 02
5. विश्वरूप डॉ. हिमांशु एवं डॉ. वीणा ''राष्ट्रीय संगोष्ठी संगीत विभाग डॉ. हरी सिंह गौर विश्वविद्यालय सागर'' सागर। प्रकाशक डॉ. अलकनंदा पलनीटकर द्वारा सुलभ प्रिंटर्स : 2001, पृष्ठ 38
6. खोत डॉ. जयंत ''समकालीन भारत में संगीत की बदलती परिस्थितियाँ उभरती चुनौतियाँ एवं समाधान'' सागर। प्रांजल प्रकाशन : 2005 पृष्ठ 20
7. टाक तेजसिंह ''संगीत जिज्ञासा और समाधान'' नई दिल्ली। राधा पब्लिकेशन : 2012 पृष्ठ 275
8. तोमर अवधेश प्रताप सिंह ''संगीत शास्त्र सागर'', सागर, कृष्णा कम्प्यूटर्स : 2012 पृष्ठ 01
9. सहस्त्रबुद्धे डॉ. स्मिता ''हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की गीत शैलियों का इतिहास (ध्रुवपद से ख्याल शैली तक)'' नई दिल्ली, राधा पब्लिकेशन, 2018 पृष्ठ 01
10. मराठे डॉ. स्वप्ना ''कोरोना काल वैश्वीकरण एवं संचार क्रांति के परिप्रेक्ष्य में संगीत शिक्षण तथा मंच प्रस्तुतियों के विविध आयाम'' वाराणसी। सार्वभौमिक प्राच्य विद्या संस्था : 2021 पृष्ठ संख्या 70